श्रीमद्भागवतम्

स्कन्ध 4

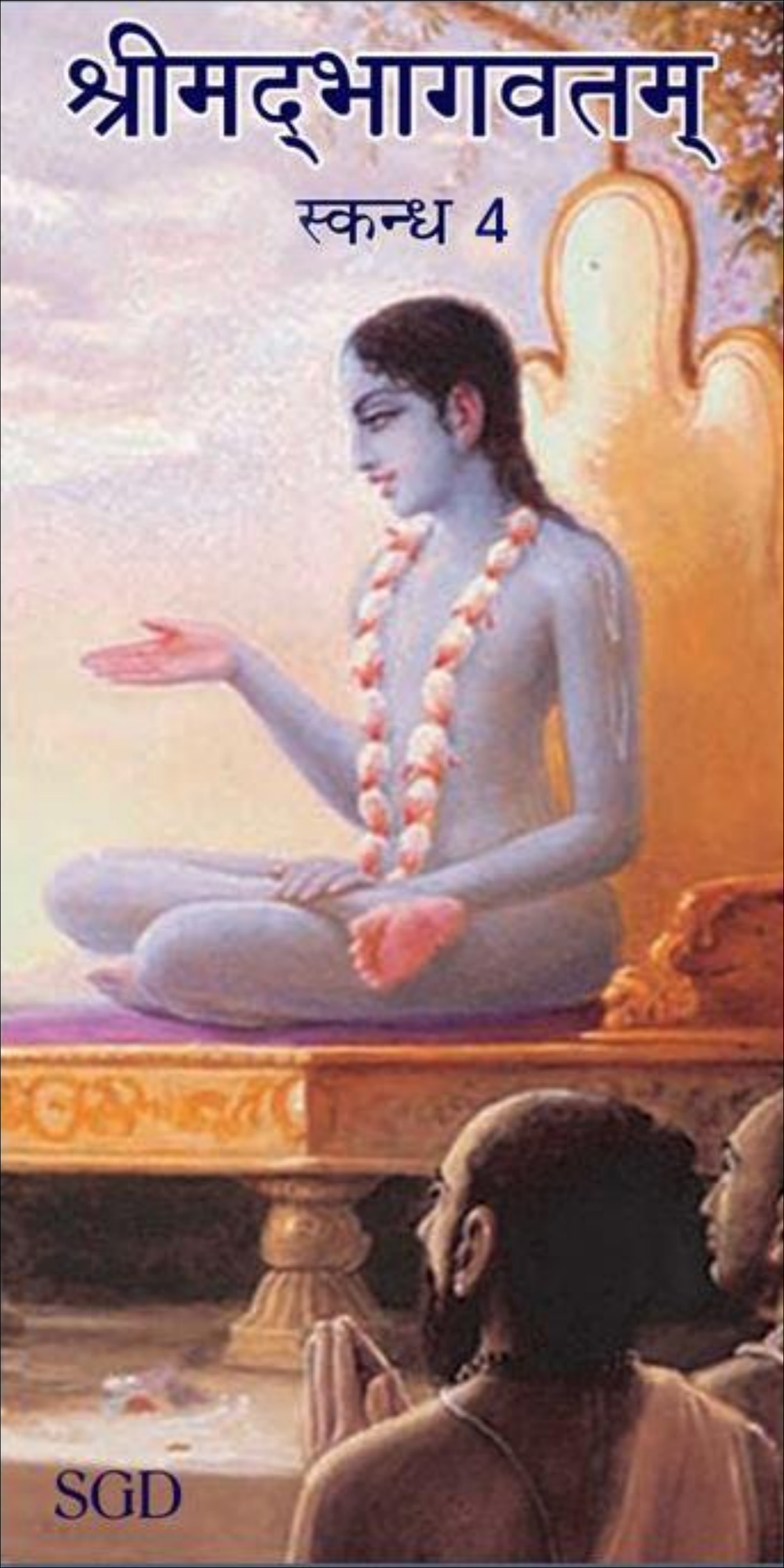

SGD

श्रीमद् भागवत पुराण

अध्याय 14

राजा वेन की कथा

श्रीलगुरुदेव

श्लोक 1: महर्षि मैत्रेय ने आगे कहा : हे महावीर विदुर, भृगु इत्यादि ऋषि सदैव जनता के कल्याण के लिए चिन्तन करते थे। जब उन्होंने देखा कि राजा अंग की अनुपस्थिति में जनता के हितों की रक्षा करनेवाला कोई नहीं रह गया तो उनकी समझ में आया कि बिना राजा के लोग स्वतंत्र एवं असंयमी हो जाएँगे।

श्लोक 2: तब ऋषियों ने वेन की माता रानी सुनीथा को बुलाया और उनकी अनुमति से वेन को विश्व के स्वामी के रूप में सिंहासन पर बिठा दिया। तथापि सभी मंत्री इससे असहमत थे।

श्लोक 3: यह पहले से ज्ञात था कि वेन अत्यन्त कठोर तथा क्रूर था, अत: जैसे ही राज्य के चोरों तथा उचक्कों ने सुना कि वह राज-सिंहासन पर आरूढ़ हो गया है, वे उससे बहुत भयभीत हुए और वे सब

उसी तरह छिप गये जिस प्रकार चूहे अपने आपको सर्पों से छिपा लेते हैं।

श्लोक 4: जब राजा सिंहासन पर बैठा तो वह आठों ऐश्वर्यों से युक्त होकर सर्वशक्तिमान बन गया। फलत: वह अत्यन्त घंमडी हो गया। झूठी प्रतिष्ठा के कारण वह अपने को सर्वश्रेष्ठ समझने लगा और इस प्रकार से वह महापुरुषों का अपमान करने लगा।

श्लोक 5: राजा वेन अपने ऐश्वर्य के मद से अन्धा होकर रथ पर आसीन होकर निरंकुश हाथी के

समान सारे राज्य में घूमने लगा। जहाँ-जहाँ वह जाता, आकाश तथा पृथ्वी दोनों हिलने लगते।

श्लोक 6: राजा वेन ने अपने राज्य में यह ढिंढोरा पिटवा दिया कि सभी द्विजों (ब्राह्मणों) को अब से किसी भी तरह का यज्ञ करने, दान देने या घृत की आहुति देने की मनाही कर दी गई। दूसरे शब्दों में, उसने सभी प्रकार के धार्मिक अनुष्ठान बन्द करा दिये।

श्लोक 7: अत: सभी ऋषिगण एकत्र हुए और वेन के अत्याचारों को

देखकर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि संसार के मनुष्यों पर महान् संकट तथा प्रलय आनेवाला है। अत: वे दयावश परस्पर बातें करने लगे, क्योंकि वे स्वयं ही यज्ञों को सम्पन्न करनेवाले थे।

श्लोक 8: ऋषियों ने परस्पर विमर्श करके देखा कि जनता दोनों ओर से विकट स्थिति में है। जब किसी लट्ठे के दोनों सिरों पर अग्नि प्रज्ज्वलित रहती है, तो बीच में स्थित चीटियाँ अत्यन्त विकट स्थिति में रहती हैं। इसी प्रकार उस समय

एक ओर अनुत्तरदायी राजा तथा दूसरी ओर चोर- उचक्कों के कारण जनता अत्यन्त विकट स्थिति में फँसी हुई थी।

श्लोक 9: राज्य को अराजकता से बचाने के लिए सोच-विचार कर ऋषियों ने राजनीतिक संकट के कारण वेन को, अयोग्य होते हुए भी राजा बनाया था। किन्तु हाय! अब तो जनता राजा द्वारा ही अशान्त बनाई जा रही है। ऐसी अवस्था में भला लोग किस प्रकार सुखी रह सकते हैं?

श्लोक 10: ऋषिगण अपने आप में सोचने लगे कि सुनीथा के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण राजा वेन स्वभाव से अत्यन्त दुष्ट (उत्पाती) है। इस दुष्ट राजा का समर्थन करना वैसा ही है जैसे सर्प को दूध पिलाना। अब यह समस्त संकटों का कारण बन गया है।

श्लोक 11: हमने इस वेन को नागरिकों की सुरक्षा के हेतु नियुक्त किया था, किन्तु अब वह उनका शत्रु बन चुका है। इन सब न्यूनताओं के होते हुए भी, हमें चाहिए कि उसे

तुरन्त समझाने का प्रयत्न करें। ऐसा करने से हमें उसके पाप स्पर्श नहीं कर सकेंगे।

श्लोक 12: संत सदृश मुनि लोगों ने आगे सोचा : निस्सन्देह हम उसके दुष्ट स्वभाव से भली भाँति परिचित हैं, तो भी हमीं ने वेन को राजसिंहासन पर बैठाया है। यदि हम उसे अपनी सलाह मानने के लिए राजी नहीं कर लेते तो जनता उसको दुत्कारेगी और हम भी उनका साथ देंगे। इस प्रकार हम अपने तेज से उसे भस्म कर डालेंगे।

श्लोक 13: ऐसा निश्चय करके ऋषिगण राजा वेन के पास गये और अपना वास्तविक क्रोध छिपाते हुए उन्होंने उसे मीठे वचनों से समझाया-बुझाया। फिर उन्होंने इस प्रकार कहा।

श्लोक 14: मुनियों ने कहा: हे राजन्, हम आपके पास सदुपदेश देने आये हैं। कृपया ध्यानपूर्वक सुनें। ऐसा करने से आपकी आयु, ऐश्वर्य, बल तथा कीर्ति बढ़ेगी।

श्लोक 15: जो लोग धार्मिक नियमों के अनुसार रहते हैं और जो मन, वचन, शरीर तथा बुद्धि से इनका

पालन करते हैं, वे स्वर्गलोक को जाते हैं, जो समस्त शोकों (दुखों) से रहित है। इस प्रकार भौतिक प्रभाव से छूट कर वे जीवन में असीम सुख प्राप्त करते हैं।

श्लोक 16: मुनियों ने आगे कहा : अत: हे महान् वीर, आपको सामान्य जनता के आध्यात्मिक जीवन को विनष्ट करने में निमित्त नहीं बनना चाहिए। यदि आपके कार्यों से उनका आध्यात्मिक जीवन विनष्ट होता है, तो आप निश्चित रूप से अपने

ऐश्वर्यपूर्ण तथा राजोचित पद से नीचे गिरेंगे।

श्लोक 17: मुनियों ने आगे कहा : जब राजा दुष्ट मंत्रियों के तथा चोर-उचक्कों के उत्पातों से नागरिकों की रक्षा करता है, तो अपने इन पवित्र कार्यों के कारण वह अपनी प्रजा से कर प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार पवित्र राजा इस संसार में और मृत्यु के बाद भी सुख भोग सकता है।

श्लोक 18: वह राजा पवित्र समझा जाता है, जिसके राज्य तथा नगरों में प्रजा वर्ण तथा आश्रम की

आठ सामाजिक व्यवस्थाओं का कठोरता से पालन करती है और जहाँ के नागरिक अपने विशिष्ट धर्म (वृत्ति) द्वारा भगवान् की सेवा में संलग्न रहते हैं।

श्लोक 19: हे महाभाग, यदि राजा यह देखता है कि दृश्य जगत के मूल कारण भगवान् तथा हर एक के भीतर स्थित परमात्मा की पूजा होती है, तो भगवान् प्रसन्न होते हैं।

श्लोक 20: भगवान् विश्व के नियन्ता बड़े-बड़े देवताओं द्वारा पूजित हैं। जब वे प्रसन्न हो जाते हैं,

तो कुछ भी प्राप्त करना दुर्लभ नहीं रह जाता। इसीलिए सभी देवता, लोकपाल तथा उनके लोकों के निवासी भगवान् को सभी प्रकार की पूजा-सामग्री अर्पित करने में अत्यधिक प्रसन्नता का अनुभव करते हैं।

श्लोक 21: हे राजन्, भगवान् प्रमुख अधिष्ठाता देवों सहित समस्त लोकों में समस्त यज्ञों के फल के भोक्ता हैं। परमेश्वर तीनों वेदों के सार रूप हैं, वे हर वस्तु के स्वामी हैं और सारी तपस्या के चरम लक्ष्य हैं। अत:

आपके देशवासियों को आपकी उन्नति के लिए विविध प्रकार के यज्ञ करने चाहिए। दर असल आपको चाहिए कि आप उन्हें यज्ञ करने के लिए निर्देशित करें।

श्लोक 22: जब आपके राज्य के सारे ब्राह्मण यज्ञ में संलग्न होने लगेंगे तो भगवान् के स्वांश समस्त देवता उनके कार्यों से प्रसन्न होकर आपको मनवांछित फल देंगे; अत: हे वीर, यज्ञों को बन्द न करें। यदि उन्हें बन्द कर ते हैं तो आप देवताओं का अनादर करेंगे।

श्लोक 23: राजा वेन ने उत्तर दिया : तुम तनिक भी अनुभवी नहीं हो। यह अत्यन्त दुख की बात है कि तुम लोग जो कुछ करते रहे हो वह धार्मिक नहीं है, किन्तु तुम लोग उसे धार्मिक मान रहे हो। दर असल, तुम लोग अपने पालनकर्ता वास्तविक पति को त्याग रहे हो और पूजा करने के लिए किसी जार (परपति) की तलाश में हो।

श्लोक 24: जो लोग अज्ञानतावश उस राजा की पूजा नहीं करते जो कि वास्तव में भगवान् है, तो

वे न तो इस लोक में और न परलोक में सुख का अनुभव करते हैं।

श्लोक 25: तुम लोग देवताओं के इतने भक्त हो, किन्तु वे हैं कौन? निस्सन्देह, इन देवताओं के प्रति तुम लोगों का स्नेह उस कुलटा स्त्री का सा है, जो अपने विवाहित जीवन की उपेक्षा करके अपने जारपति पर सारा ध्यान केन्द्रित कर देती है।

श्लोक 26-27: विष्णु, ब्रह्मा, शिव, इन्द्र, वायु, यम, सूर्यदेव, पर्जन्य, कुबेर, चन्द्रदेव, क्षितिदेव, अग्नि देव, वरुण तथा अन्य बड़े-बड़े

देवता जो आशीर्वाद या शाप दे सकने में समर्थ हैं, वे सब राजा के शरीर में वास करते हैं। इसीलिए राजा सभी देवताओं का आगार माना जाता है। देवता राजा के शरीर के भिन्नांश हैं।

श्लोक 28: राजा वेन ने आगे कहा : इसलिए, हे ब्राह्मणो, तुम मेरे प्रति ईर्ष्या त्याग कर अपने अनुष्ठान कार्यों द्वारा मेरी पूजा करो और समस्त पूजा-सामग्री मुझ पर ही चढ़ाओ। यदि तुम लोग भी बुद्धिमान होगे, तो समझ सकोगे कि मुझसे श्रेष्ठ ऐसा कोई पुरुष नहीं जो समस्त यज्ञों

की प्रथम आहुतियों को ग्रहण कर सके।

श्लोक 29: महर्षि मैत्रेय ने आगे कहा : इस प्रकार अपने पापमय जीवन के कारण दुर्बोध होने तथा सही राह से विचलित होने के कारण राजा समस्त पुण्य से क्षीण हो गया। उसने ऋषियों की सादर प्रस्तुत प्रार्थनाएँ स्वीकार नहीं कीं, अत: उसकी भर्त्सना की गई।

श्लोक 30: हे विदुर, तुम्हारा कल्याण हो। उस मूर्ख राजा ने अपने को अत्यन्त विद्वान् समझकर ऋषियों

तथा मुनियों का अपमान किया। राजा के वचनों से ऋषियों दिल टूट गया और वे उस पर अत्यन्त क्रुद्ध हुए।

श्लोक 31: सभी ऋषि तुरन्त हाहाकार करने लगे : इसे मारो! इसे मारो! यह अत्यन्त भयावह और पापी पुरुष है। यदि यह जीवित रहा तो निश्चित रूप से सारे संसार को देखते-देखते भस्म कर देगा।

श्लोक 32: ऋषियों ने आगे कहा : यह अपवित्र, दम्भी व्यक्ति सिंहासन पर बैठने के लिए सर्वथा अयोग्य है। यह इतना निर्लज्ज है कि इसने

भगवान् विष्णु का भी अपमान करने का दुस्साहस किया है।

श्लोक 33: अभागे राजा वेन को छोडक़र भला ऐसा कौन होगा जो उन भगवान् की निन्दा करेगा, जिनकी कृपा से सभी प्रकार की सम्पत्ति एवं ऐश्वर्य प्राप्त होता हो?

श्लोक 34: इस प्रकार अपने छिपे क्रोध को प्रकट करते हुए ऋषियों ने राजा को तुरन्त मार डालने का निश्चय कर लिया। राजा वेन भगवान् की निन्दा के कारण पहले से ही मृत तुल्य था। अत: बिना किसी हथियार

के ही मुनियों ने हुंकारों से वेन को मार डाला।

श्लोक 35: इस सब के बाद ऋषिगण अपने-अपने आश्रमों को चले गये तो राजा वेन की माता सुनीथा अपने पुत्र की मृत्यु से अत्यधिक शोकाकुल हो उठी। उसने अपने पुत्र के शव को कुछ द्रव्यों के द्वारा तथा मंत्र के बल से सुरक्षित रखने का निश्चय किया।

श्लोक 36: एक बार ये ही ऋषि सरस्वती नदी में स्नान करके यज्ञ-अग्नि में आहुति डालने का अपना

नित्य कर्म कर रहे थे। इसके पश्चात् नदी के तट पर बैठ कर वे दिव्य पुरुष तथा उनकी लीलाओं के विषय में चर्चा करने लगे।

श्लोक 37: उन दिनों देश में अनेक उपद्रव हो रहे थे जिनसे समाज में आतंक उत्पन्न हो रहा था। अत: सभी मुनि परस्पर बातें करने लगे : चूँकि राजा मर चुका है और संसार का कोई रक्षक नहीं है, अत: चोर-उचक्कों के कारण प्रजा पर विपत्ति आ सकती है।

श्लोक 38: जब ऋषिगण इस प्रकार विचार-विर्मश कर रहे थे तो उन्होंने चारों दिशाओं से धूल की आँधी उठती देखी। यह आँधी उन चोर-उचक्कों के दौड़ा-भागी से उत्पन्न हुई थी जो नागरिकों को लूट रहे थे।

श्लोक 39-40: उस अंधड़ को देखकर साधु पुरुषों ने समझ लिया कि राजा वेन की मृत्यु के कारण अत्यधिक अव्यवस्था फैल गई है। बिना सरकार के राज्य कानून तथा व्यवस्था से विहीन हो जाता है,

फलत: उन घातक चोर-उचक्कों का प्राबल्य हो उठा जो प्रजा की सम्पत्ति को लूट रहे थे। यद्यपि ऋषिगण इस उपद्रव को अपनी शक्ति से रोक सकते थे—जिस प्रकार उन्होंने राजा का वध किया था—किन्तु उन्होंने ऐसा करना अनुचित समझा। अत: उन्होंने उपद्रव को रोकने का कोई प्रयास नहीं किया।

श्लोक 41: ऋषिगण सोचने लगे कि यद्यपि ब्राह्मण शान्त और समदर्शी होने के कारण निष्पक्ष होता है, तो भी उसका कर्तव्य है कि वह दीनों की उपेक्षा न करे। ऐसा करने से उसका

आत्मबल उसी प्रकार घट जाता है, जिस प्रकार फूटे बर्तन से पानी रिस जाता है।

श्लोक 42: मुनियों ने निश्चय किया कि राजर्षि अंग के वंश को नष्ट नहीं होने देना चाहिए, क्योंकि इस वंश का वीर्य अत्यन्त शक्तिशाली रहा है और उसकी सन्तानें भगवत्परायण होती रही हैं।

श्लोक 43: इस निश्चय के बाद, साधु पुरुषों तथा मुनियों ने राजा वेन के मृत शरीर की जाँघों का अत्यन्त शक्तिपूर्वक तथा एक विशेष विधि से

मंथन किया। मंथन के फलस्वरूप राजा वेन के शरीर से एक बौने जैसा व्यक्ति उत्पन्न हुआ।

श्लोक 44: राजा वेन की जंघाओं से उत्पन्न इस व्यक्ति का नाम बाहुक था। उसकी सूरत कौवे जैसी काली थी। उसके शरीर के सभी अंग ठिगने थे, उसके हाथ तथा पाँव छोटे थे और जबड़े लम्बे थे। उसकी नाक चपटी, आँखें लाल-लाल तथा केश ताँबे जैसे रंग के थे।

श्लोक 45: वह अत्यन्त विनम्र था और अपना जन्म होते ही उसने

विनत होकर पूछा, “महाशय, मैं क्या करूँ?” ऋषियों ने कहा, “बैठ जाओ” (निषीद)। इस प्रकार नैषाद जाति का जनक निषाद उत्पन्न हुआ।

श्लोक 46: जन्म होते ही उसने (निषाद ने) राजा वेन के समस्त पापपूर्ण कृत्यों के फलों को स्वयं धारण कर लिया। इसलिए यह निषाद जाति सदैव पापपूर्ण कृत्यों में—यथा चोरी, डाका तथा शिकार मेंलगी रहती है। फलत: इन्हें पर्वतों तथा जंगलों में ही रहने दिया जाता है।

* * * * * * *

श्रीलगुरुदेव